© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 8| Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

वेद शास्त्रों से मानवीय मूल्यों एवं मानव का उत्थान

प्रो. जीजे डेसाई

सहायक प्रोफेसर, डी. सी. म. कला और वाणिज्य कॉलेज, वीरमगाम

वेद शास्त्र मानव को मानव बनाये रखने की सर्वाधिक मूल्यवान निधि हैं। विद्वानों का मानना है कि ऋग्वेद शास्त्र न केवल भारत का बल्कि समूचे विश्व का प्राचीनतम ग्रन्थ है। भारतीय धर्म और संस्कृति का मूल स्रोत वेद शास्त्र ही है। मनुस्मृति में कहा गया है वेद शास्त्रोऽखिलो धर्ममूलम्। वेद शास्त्र कब लिखे गये इस स□बन्ध में विश्व के विद्वानों के विभिन्न मत हैं। इनका समय कुछ विद्वान आज से तीन लाख वर्ष पहले तक ले जाते हैं जबकि कुछ ईसा से क्ख वर्ष पूर्व तक ले आते हैं। जर्मन विद्वान मै€समूलर के अनुसार भी वेद शास्त्र आज से लगभग तीन हजार वर्ष पूर्व अर्थात् ईसा से लगभग क्ख सौ वर्ष पूर्व लिखे गये होंगे। लोकमान्य तिलक ने गणित ज्योतिष के प्रमाणों से सिद्ध किया है कि ऋग्वेद शास्त्र ईसा से म हजार वर्ष पूर्व से लेकर ब हजार वर्ष पूर्व के बीच लिखा गया होगा। वैसे पार□परिक मान्यता यह है कि वेद शास्त्र अपौरुषेय और अनादि हैं और जो अलौकिक ईश्वरीय ज्ञान ऋषियों ने अपनी अन्त:प्रज्ञा द्वारा जाना उसे ही मंत्ररूप में रख दिया है। अत: इनका समय निर्धारित करने जैसी बात अनावश्यक है।

यह उल्लेखनीय है कि हजारों वर्षों से वैदिक मन्त्रों का स्वरूप इस देश में उसी प्रकार शुद्ध और अक्षुण्ण बना हुआ है। इसका कारण यही है कि वैदिक विद्वानों ने वेद शास्त्रपाठ की पर□परा को जीवित रखते हुए अनेक शताŽदयों से ऐसी व्यवस्था की हुई थी कि एक गुरुकुल वेद शास्त्र के किसी एक भाग को शुद्ध रूप में कंठस्थ कर उसे अगली पीढ़ियों को निरन्तर सौंपता जाए। इस भाग को शाखा का नाम दिया गया तथा प्रत्येक अंश, गुरुकुल या गोत्र के लिए कम से कम एक वेद शास्त्र की किसी शाखा को कंठस्थ करने तथा उसकी पर□परा अक्षुण्ण रखने का दायित्व दिया गया। कुछ वंशों ने दो वेद शास्त्रों का अध्ययन कर द्विवेद शास्त्री, तीन वेद शास्त्रों का अध्ययन कर त्रिवेद शास्त्री और चार वेद शास्त्रों का अध्ययन कर चतुर्वेदी की उपाधि इसी पर□परा के अनुसार प्राप्त की थी। कहा जाता है कि पहले समस्त वाङ्मय एक स□मलित ज्ञानराशि के रूप में था जिसका विभिन्न वर्गों और शाखाओं में विभाजन महर्षि वेदव्यास ने किया। उनका नाम भी इसी कारण वेदव्यास पड़ा जिसका अर्थ है वेद शास्त्रों का विभाजन या स□पादन करने वाला। चार वेद शास्त्र प्रसिद्ध हैं—ऋग्वेद शास्त्र, सामवेद शास्त्र, यजुर्वेद और अथर्ववेद शास्त्र। यह माना जाता है कि ऋग्वेद शास्त्र सर्वाधिक प्राचीन हैं—ऋ का अर्थ है छन्द या पद्य। इन्हीं छन्दों या पद्यों को गानबद्ध कर साम वेद शास्त्र का उद्भव हुआ जिसका अर्थ है गीत। इसके बाद यजु: अर्थात् गद्य में निबद्ध यजुर्वेद बना। कहा जाता है कि सर्वप्रथम ये वेद शास्त्र ही संहिताबद्ध हुए जिन्हें त्रयी कहा जाता था। ऋग्वेद शास्त्र में देवताओं की स्तुतियाँ और सृष्टि विद्या है, यजुर्वेद में यज्ञ का कर्मकाण्ड और सामवेद शास्त्र में स्तुतिगान। यह त्रयी ही वेद शास्त्र नाम से कही जाती थी। बाद में गूढ़ व्यावहारिक क्रियाओं का प्रतिपादन करने हेतु अथर्वा ऋषि ने अथर्ववेद शास्त्र रचा किन्तु पार□परिक मान्यता यह है कि त्रयी का अर्थ है छन्द, गान और गद्य ये तीन विधाएँ। चारों वेद शास्त्रों में ये विधाएँ विद्यमान हैं अत: चारों को त्रयी कहा जा सकता है, कोई पूर्ववर्ती

या परवर्ती वेद शास्त्र नहीं है। कहते हैं ग्रन्थ लेखन की पर􀀀परा के अभाव में गुरु वेद शास्त्र मंत्रों को शिष्यों को कंठस्थ करा दिया करते थे। इसी श्रवण पर􀀀परा से सनातन रूप से चले आने के कारण इन्हें श्रुति कहा जाता था। किन्तु एक मत यह भी है कि श्रुति का तात्पर्य है स्वानुभूत ज्ञान जो अन्त:प्रज्ञा से स्वत: सुना जाए। उस ज्ञान के आधार पर स्मरण करके उपजा ज्ञान स्मृति कहा जाता है। इस प्रकार श्रुति और स्मृति ये शŽद मौलिक ज्ञान और आधारित ज्ञान का भेद बताने के लिए हैं, बाकी लेखन की पर􀀀परा तो पहले से ही चल ही रही है।

वैदिक वाङ्मय बड़ा विशाल है। महाभाष्यकार पतंजलि के भाष्य में ऋग्वेद शास्त्र की ख्र शाखाएँ, यजुर्वेद की क शाखाएँ, सामवेद शास्त्र की एक हजार तथा अथर्ववेद शास्त्र की – शाखाएँ थीं, इसका उल्लेख मिलता है। लगता है इसमें से अनेक शाखाएँ काल के गाल में समा गईं। आजकल ऋग्वेद शास्त्र की शाकल संहिता ही उपलŽध है। आश्वालयन भी। शाखायन शाखा भी उपलŽध हुई है। यजुर्वेद के दो भाग हैं कृष्ण यजुर्वेद जिसमें छन्दोबद्ध ऋचाओं की प्रधानता है। (साथ में गद्य-बद्ध व्या􀀀याएँ या ब्राह्मण हैं) तथा शु€ल यजुर्वेद, जिसमें गद्य है। कृष्ण यजुर्वेद की तीन संहिताएँ तैŸिारीय, मैत्रायणी तथा कठ उपलŽध हैं। शु€ल यजुर्वेद की माध्यन्दिन तथा काण्व संहिताएँ प्राप्त हैं। सामवेद शास्त्र की कौथुमी, राणायणी, जैमिनीय और कापिष्ठल, ब संहिताएँ उपलŽध हैं तथा अथर्ववेद शास्त्र की शौनक एवं पैप्पलाद ही प्राप्त हैं। संहिताओं अर्थात मंत्र समूहों में ऋग्वेद शास्त्र में दस हजार चार सौ सड़सठ ऋचाएँ, कृष्ण यजुर्वेद में लगभग चार हजार, सामवेद शास्त्र में लगभग साढ़े तीन हजार तथा अथर्ववेद शास्त्र में छह हजार मंत्र ही आजकल उपलŽध होते हैं। इस प्रकार आज वैदिक वाङ्मय के केवल सŸााईस हजार तीन सौ सड़सठ मंत्र ही प्राप्य हैं।

वेद शास्त्र के इन मंत्रों को हम आज भी उसी रूप में पाते हैं जिस रूप में ये हजारों वर्ष पूर्व थे। यह एक अत्यन्त उल्लेखनीय और विश्व साहित्य में अनुपम बात है कि मंत्रों का पाठ याने टै€स्ट ज्यों का त्यों बना रहे, इसमें जरा भी विकृति या परिवर्तन न आ पाये, इसके लिए बड़ी विशिष्ट वैज्ञानिक व्यवस्था हजारों वर्षो से वैदिक विद्वानों ने कर रखी थी अन्यथा इतनी ल􀀀बी कालावधि में किसी भी टै€स्ट में पाठ भेद या परिवर्तन आना अपरिहार्य हो जाता है। वेद शास्त्र में टै€स्ट को बिना मुद्रण की सहायता के भी किस प्रकार अक्षुण्ण और अविकृत रखा जाए इसके लिए प्रत्येक मंत्र के शŽद को सीधा और उलटा कंठस्थ करने तथा एक-एक शŽद को आगे-पीछे करके याद करने की ऐसी प्रथाएँ बनाई गईं जिससे एक शŽद भी इधर-उधर नहीं हो सके। इस प्रकार के अ􀀀यास को आज भी विकृति पाठ कहते हैं। ऐसी व्यवस्था के कारण ही वेद शास्त्रों की ऋचाओं में न तो परिवर्तन हो पाया, न पाठ भेद और न क्षेपक या प्रक्षिप्त अंग ही जुड़ पाए। इसीलिए विश्व के सभी शोध विद्वानों का यह स्पष्ट मत है कि वेद शास्त्र का टै€स्ट शोध की दृष्टि से अत्यन्त प्रामाणिक और मान्य हैं।

वेद शास्त्र के मंत्रों का भाष्य तथा उनके दार्शनिक सिद्धान्तों का विवेचन करने के लिए बहुत बड़ा साहित्य लिखा गया। इन ग्रन्थों को ब्राह्मण ग्रन्थ कहते हैं। इसके भी अनेक प्रकार हैं—ब्राह्मण अर्थात् भाष्य, आरण्यक अथवा दार्शनिक विवेचन, उपनिषद अथवा बौद्धिक चिन्तन आदि।

प्रत्येक वेद शास्त्र के अलग–अलग ब्राह्मण और उपनिषदें हैं। जैसे ऋग्वेद शास्त्र के ऐतरेय ब्राह्मण, कौषीतकि ब्राह्मण और ऐतरेय, कौषीतकि आदि आरण्यक तथा उन्हीं नामों की उपनिषदें। यजुर्वेद का शतपथ ब्राह्मण, तैटिरीय ब्राह्मण, कठोपनिषद्, बृहदारण्यक उपनिषद आदि। सामवेद शास्त्र का ताण्ड्य, षड्विंश आदि ब्राह्मण, छान्दोग्य उपनिषद्, केनोपनिषद आदि और अथर्ववेद शास्त्र का गोपथ ब्राह्मण, मुण्डकोपनिषद्, प्रश्नोपनिषद् आदि। सनातन धर्म की पर□परा की मान्यता यह है कि संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद आदि सभी मिल कर वेद शास्त्र या श्रुति कहलाते हैं। वैसे 'मंत्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्' के अनुसार संहिता और ब्राह्मण को वेद शास्त्र कहा जाता है। काल की गति से वेद शास्त्रों के मन्त्रों के अ□यास में धीरे–धीरे ह्रास होता गया और उपनिषदों आदि का अ□यास करते–करते विद्वानों ने कई उपनिषदें और जोड़ दीं—भक्ति आन्दोलन के साथ भक्ति मार्ग की उपनिषदें भी जुड़ती गई। उन्निसवीं सदी के अन्त में महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना कर वेद शास्त्र मन्त्रों के अ□यास के उद्देश्य से इनके पुनरुद्धार आन्दोलन को बल दिया। इस आर्य समाज को केवल वेद शास्त्रों की संहिताएँ ही प्रमाण रूप से मान्य हैं, अन्य ग्रन्थ नहीं। सनातन पर□परा के अनुसार वेद शास्त्र मन्त्रों मं अलौकिक शक्ति है। अनेक प्रतीकात्मक अर्थ उनसे निकलते हैं। ऐसे प्रतीकों और अर्थों का विवेचन करने हेतु पिछले हजारों वर्षों में वेद शास्त्रों के अनेक भाष्य लिखे गये जिनमे आचार्य सायण का भाष्य प्रमुख है।

वैदिक कर्मकाण्ड और आचार संहिता के प्रतिपादन के लिए श्रौत सूत्र, स्मार्त सूत्र, गृह्य सूत्र आदि तथा शिल्प शास्त्र के विवेचन के लिए शुल्व सूत्र लिखे गये हैं, वैदिक व्याकरण सिखाने के लिए प्रातिशा□य, उच्चारण सिखाने के लिए शिक्षा, छन्द: शास्त्र सिखाने के लिए छन्द, शŽद शास्त्र सिखाने के लिए निरुक्त आदि। इन्हें वेद शास्त्रांग कहा जाता है। इस प्रकार अपरिमित ग्रन्थ राशि, वेद शास्त्रों पर आधारित, आज भी उपलŽध होती है।

वेद शास्त्रों में सभी प्रकार की ज्ञान की राशि निहित है। अग्नि, वायु, सूर्य आदि प्राकृतिक महाशक्तियों की स्तुतियाँ, सृष्टिविद्या, ज्योतिष, शरीरशास्त्र, सामाजिक कल्याण के अनुष्ठानों के सिद्धान्त, दार्शनिक चिन्तन आदि सब प्रकार का साहित्य वेद शास्त्रों में उपलŽध है। प्रत्येक मन्त्र जिस विशेष देवता को लक्ष्य करके लिखा गया है उसका उल्लेख, जिस ऋषि के मानस में उसका आविर्भाव हुआ, उसका उल्लेख, जिस छन्द में लिखा गया उसका उल्लेख, इस प्रकार का स□पादन करके वेदव्यास ने वेद शास्त्रों को पृथक् भागों में विभाजित किया था, ऐसा माना जाता है। इसके अनुसार ऋग्वेद शास्त्र क भागों में विभाजित है जिन्हैं मण्डल कहा जाता है। प्रत्येक मण्डल में अनेक सूक्त हैं, यों कुल क्ख्ब् सूक्त हैं जिनमें क्ब्ब से अधिक मन्त्र हैं। ऋग्वेद शास्त्र का कभी–कभी मण्डलों और सूक्तों के वर्गीकरण के अनुसार सन्दर्भ दिया जाता है, कभी–कभी अष्टकों और अध्यायों के अनुसार। इसी प्रकार यजुर्वेद ब अध्यायों में, सामवेद शास्त्र ख आर्चिकों में और अथर्ववेद शास्त्र ख काण्डों में विभाजित है। एक अन्य शोध सारणी के अनुसार चारों वेद शास्त्रों की चारों संहिताओं में कुल ख्ख्क्म मन्त्र हैं।

शास्त्र शाखाएँ

यह स्पष्ट किया जा चुका है कि ऋग्वेद शास्त्र मानव के पुस्तकालय की सर्वप्रथम पुस्तक मानी जाती है। आज इसकी जो संहिता मुद्रित रूप में उपलŽध है वह मै€समूलर द्वारा सर्वप्रथम इंग्लैण्ड में देवनागरी टाइप में क्त्ब्त में मुद्रित कराई गई थी। वैसे पतंजलि ने महाभाष्य में पस्पशाह्निक में लिखा था 'एकविंशतिधा बाह्वृच्यम्' जिसका तात्पर्य यह माना जाता है कि इसकी ख्क शाखाएँ थीं जिन्हें कुछ ख्क संहिताएँ भी मानते हैं किन्तु आज जो विशाल संहिता मिलती है वह शाकल संहिता कहलाती है जो विदग्ध शाकल्य द्वारा संकलित होने के कारण शाकल कहलाती है। जयचंद्र विद्यालंकार के अनुसार शाकलनगरी (पंजाब के उŽार में मद्रदेश की राजधानी) का विद्वान महर्षि शाकल्य कहलाया जिसका असली नाम देवमित्र था। उसने ऋग्वेद शास्त्र का संहिताकरण किया था।

ऋग्वेद शास्त्र संहिता दो तरह से विभाजित हैं मंडलों में और अष्टकों में। इसके दस मण्डल हैं और क्ख्त सूक्त हैं। त्त्भ अनुवाक हैं ख्त वर्ग हैं। अष्टा कों के वर्गीकरण के अनुसार त्त अष्टक, म्ब अध्याय और ख्त वर्ग हैं। प्रथम मण्डल में क–क, द्वितीय में ब्फ, तृतीय में म्ख, चतुर्थ में भ्त, पंचम में त्त्त्र, षष्ठ में त्रभ, सप्तम में क्ब, अष्टम में क्क्ब, नवम में क्फ और दशम मण्डल में क–क सूक्त हैं। प्रथम और दशम मंडलों में अपेक्षाकृत परवर्ती ऋचाएँ भी समाविष्ट हैं जबकि दूसरे से लेकर आठवें तक प्राचीनतम ऋचाएँ हैं ऐसा पाश्चात्य शोध विद्वान मानते हैं। प्राचीन आचार्यों ने वेद शास्त्रों का एक–एक अक्षर गिन कर अभिलिखित कर दिया था। शौनक की अनुक्रमणिका में सूचना है कि ऋग्वेद शास्त्र संहिता में क्भ्त मंत्र, क्भ्फ्त्ख्क शŽद और ब्फ्ख अक्षर हैं। इन अक्षरों से मन्वन्तरों की गणना निकल आती है।

वैसे ऋग्वेद शास्त्र की शाखाओं में शाकल, बाष्कल, आश्वलायन, शांखायन और मांडूकेय ये पाँच गिनाई जाती हैं। पं. भगवद्दŽाजी ने वैदिक वाङ्मय के इतिहास में ख्त्र शाखाएँ गिनाई है जिनमें मुद्गल, गालव, शालीय, वात्स्य, रौशिरि बोध्य, अग्निमाठर, पराशर, जातूकर्ण्य, आश्वलायन, शांखायन कौषीतकी, महाकौषीतकी, शांŽय, मांडूकेय, बह्वृच, पैंग्य, उद्दालक, शतबलाक्ष, गज बाष्कलि, भारद्वाज, ऐतरेय, वशिष्ठ, सुलभ और श्येनक शामिल हैं। आज भी शाकल, आश्वलायन और शांखायन शाखाध्यायी विद्वान भारत में फैले हुए हैं।

प्रत्येक वेद शास्त्र की व्या□या के लिए ब्राह्मण ग्रन्थ लिखे गये जिनमें वेद शास्त्रमंत्रों के यज्ञादि में प्रयोग की विधि भी बताई गई। उनमें निहित ज्ञान का विवेचन आरण्यकों में किया गया और उनमें निहित दार्शनिक चिन्तन का व्या□यान उपनिषदों में किया गया। इस प्रकार संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद् मिलकर वेद शास्त्र वाङ्मय का मूल पाठ या टै€स्ट कहा जा सकता है।

ऋग्वेद शास्त्र का कलेवर जितना विशाल है उतना ही विशाल है उसकी विषय सामग्री का फलक। इसमें विभिन्न ज्ञानशाखाओं से संबद्ध सूक्त हैं जो दस मंडलों में वि□ाजित हैं। विभिन्न ऋषियों द्वारा प्रणीत दूसरे शŽदों में दृष्ट ये सूक्त कभी विभिन्न देवताओं को संबोधित कर विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति की कामना करते हैं, कभी ऐहलौकिक अ□युदय का आशीर्वाद देते हैं, कभी ज्ञान–विज्ञान की जानकारी देते हैं। विभिन्न छन्दों में निबद्ध सूक्त (जिनमें अधिकतर एक सूक्त में

त्रिष्टुप, अनुष्टुप या गायत्री जैसे किसी एक छन्द के ही मंत्र अर्थात् ऋचाएँ निबद्ध हैं) अपनी गरिमामय शैली में जिस ज्ञान सामग्री का रहस्य बतलाते हैं उसमें सृष्टिविज्ञान, प्राणविद्या, सोमविद्या, मधुविद्या, अनुशासन, जीवनविज्ञान आदि अनेक विषय हैं। कुछ तो रूपकात्मक शैली में ऐसे रहस्यमय ढंग से सृष्टि का विज्ञान बतलाते हैं कि उनको 'डिकोड' करके ही उनका अन्तर्निहित रहस्य जाना जा सकता है।

इस प्रकार के विज्ञान रहस्यों को समाहित करने वाले प्रमुखतः दो मंडल हैं प्रथम और दशम जिनमें सर्वाधिक महŠवपूर्ण वे सूक्त भी शामिल हैं जिन्हें भावावृŠा सूक्त अर्थात् सृष्टि के इतिहास के सूक्त भी कहा जाता है जिनमें बतलाया गया है कि जब कुछ भी नहीं था, कैसे सारी सृष्टि उद्भूत हुई, कैसे पृथ्वी, आकाश, ग्रह आदि पैदा हुए। इनके प्रथम अक्षरों के आधार पर इनके नाम विद्वत्समाज में प्रसिद्ध हो गए हैं जैसे नासदीय सूक्त (क/क्ख-) अस्यवामीय सूक्त (क/क्म्ब) पुरुष सूक्त आदि। पृथ्वी पर जीव के उद्भव और प्राणियों तथा मानवों के उद्विकास का वर्णन जिन ऋचाओं में है उन्हें पुरुध सूक्त कहा जाता है। ऐसे पुरुष सूक्त ऋग्वेद शास्त्र में भी हैं, यजुर्वेद में भी, अन्यत्र भी।

वैदिक संस्कृति यज्ञ संस्कृति कही जाती है। यज्ञ का अर्थ है किसी देवता के उद्देश्य से द्रव्य का विसर्जन अर्थात् अग्नि में हवि का होम किन्तु उसका उद्देश्य होता है दो पृथक् द्रव्यों के संमिश्रण से किसी तीसरे पदार्थ का उद्भव। यज्ञ एक सामूहिक, हर्षप्रद, ज्ञानार्जन हेतु किया जाने वाला सुनियोजित सत्र होता था जिसके अनेक प्रकार और प्रयोग वेद शास्त्रों में बतलाए गए हैं। किस प्रकार यज्ञ से देवता प्रसन्न होते हैं, किन देवताओं ने प्रसन्न होकर इस देश को €या अवदान दिया इसका संकेत भी वेद शास्त्रों में मिलता है। वेद शास्त्र के प्रमुख देवता हैं इन्द्र, वरुण, पूषा, अर्यमा, सूर्य, रुद्र, द्यौ, वसु, आदित्य, आश्वनीकुमार आदि।

इस धरती के बहुमूल्य पदार्थों का, जन्म-मृत्यु के रहस्य का, ब्रह्माण्ड के पिंडों का, आत्मा का तथा अन्य सभी प्रकार के ज्ञातव्य पदार्थों का उल्लेख ऋग्वेद शास्त्र में मिलना इसी तथ्य को पुष्ट करता है कि वेद शास्त्र हमारी समग्र ज्ञाननिधि के संकलन के रूप में सुरक्षित रखे गए हैं। उनकी बहुत सी सामग्री आज अनुपलŽध है। जो उपलŽध है वह भी विविध दृष्टियों से संपादित और वर्गीकृत है। उससे हम यह अनुमान ही कर सकते हैं कि हमारी ज्ञानसंपदा की परंपरा कैसी थी।

वेद शास्त्र, वेद शास्त्रांग, उपवेद शास्त्र आदि के अतिरिक्त संस्कृत वाङ्मय में दर्शनशास्त्र का वाङ्मय भी अत्यंत विशाल है। पूर्वमीमांसा, उŽार मीमांसा, सां य, योग, वैशेषिक और न्याय-इन छह प्रमुख आस्तिक दर्शनों के अतिरिक्त पचासों से अधिक आस्तिक-नास्तिक दर्शनों के नाम तथा उनके वाङ्मय उपलŽध हैं जिनमें आत्मा, परमात्मा, जीवन, जगत्पदार्थमीमांसा, तत्वमीमांसा आदि के सन्दर्भ में अत्यंत प्रौढ़ विचार हुआ है। आस्तिक षड्दर्शनों के प्रवर्तक आचार्यों के रूप में व्यास, जैमिनि, कपिल, पतंजि, कणाद, गौतम आदि के नाम संस्कृत साहित्य में अमर हैं। अन्य आस्तिक दर्शनों में शैव, वैष्णव, तांत्रिक आदि सैकड़ों दर्शन आते हैं। आस्तिकेतर दर्शनों में बौद्धदर्शनों, जैनदर्शनों आदि के संस्कृत ग्रंथ बड़े ही प्रौढ़ और मौलिक हैं। इनमें गंभीर विवेचन हुआ है तथा उनकी विपुल ग्रंथराशि आज भी उपलŽध है। चार्वाक,

लोकायतिक, गार्हपत्य आदि नास्तिक दर्शनों का उल्लेख भी मिलता है। वेद शास्त्रप्रामण्य को माननेवाले आस्तिक और तदितर नास्तिक के आचार्यों और मनीषियों ने अत्यंत प्रचुर मात्रा में दार्शनिक वाङ्मय का निर्माण किया है।

दर्शन सूत्र के टीकाकार के रूप में परमादृत शंकराचार्य का नाम संस्कृत साहित्य में अमर है। कौटिल्य का अर्थशास्त्र, वात्स्यायन का कामसूत्र, भरत का नाट्य शास्त्र आदि संस्कृत के कुछ ऐसे अमूल्य ग्रंथरत्न हैं – जिनका समस्त संसार के प्राचीन वाङ्मय में स्थान है। श्रीमद्भगवद्गीता का संसार में कहा जाता है – बाईबिल के बाद सर्वाधिक प्रचार है तथा विश्व की उत्कृष्टतम कृतियों में उसका उच्च और अन्यतम स्थान है। वैदिक वाङ्मय के अनंतर सांस्कृतिक दृष्टि से वाल्मीकि के रामायण और व्यास के महाभारत की भारत में सर्वोच्च प्रतिष्ठा मानी गई है। महाभारत का आज उपलŽध स्वरूप एक लाख पद्यों का है। प्राचीन भारत की पौराणिक गाथाओं, समाजशास्त्रीय मान्यताओं, दार्शनिक आध्यात्मिक दृष्टियों, मिथकों, भारतीय ऐतिहासिक जीवनचित्रों आदि के साथ–साथ पौराणिक इतिहास, भूगोल और परंपरा का महाभारत महाकोश है। वाल्मीकि रामायण आद्य लौकिक महाकाव्य है। उसकी गणना आज भी विश्व के उच्चतम काव्यों में की जाती है। इनके अतिरिक्त अष्टादश पुराणों और उपपुराणादिकों का महाविशाल वाङ्मय है जिनमें पौराणिक या मिथकीय पद्धति से केवल आर्यों का ही नहीं, भारत की समस्त जनता और जातियों का सांस्कृति इतिहास अनुबद्ध है। इन पुराणकार मनीषियों ने भारत और भारत के बाहर से आयात सांस्कृति एवं आध्यात्मिक ऐ€य की प्रतिष्ठा का सहस्राŽदयों तक सफल प्रयास करते हुए भारतीय सांस्कृति को एकसूत्रता में आबद्ध किया है।

संस्कृत के लोकसाहित्य के आदिकवि वाल्मीकि के बाद गद्य–पद्य के लाखों श्रव्यकाव्यों और दृश्यकाव्यरूप नाटकों की रचना होती चली जिनमें अधिकांश लुप्त या नष्ट हो गए। पर जो स्वल्पांश आज उपलŽध है, सारा विश्व उसका महत्व स्वीकार करता है। कवि कालिदास के अभिज्ञानशाकुन्तलम् नाटक को विश्व के सर्वश्रेष्ठ नाटकों में स्थान प्राप्त है। अश्वघोष, भास, भवभूति, बाणभट्ट, भारवि, माघ, श्रीहर्ष, शूद्रक, विशाखदŽा आदि कवि और नाटककारों को अपने अपने क्षेत्रों में अत्यंत उच्च स्थान प्राप्त है। सर्जनात्मक नाटकों के विचार से भी भारत का नाटक साहित्य अत्यंत संपन्न और महत्वशाली है। साहित्यशास्त्रीय समालोचन पद्धति के विचार से नाट्यशास्त्र और साहित्यशास्त्र के अत्यंत प्रौढ़, विवेचनपूर्ण और मौलिक प्रचुरस□यक कृतियों का संस्कृत में निर्माण हुआ है। सिद्धांत की दृष्टि से रसवाद और ध्वनिवाद के विचारों को मौलिक और अत्यंत व्यापक चिंतन माना जाता है। स्तोत्र, नीति और सुभाषित के भी अनेक उच्च कोटि के ग्रंथ हैं। इनके अतिरिक्त शिल्प, कला, संगीत, नृत्य आदि उन सभी विषयों के प्रौढ़ ग्रंथ संस्कृत भाषा के माध्यम से निर्मित हुए हैं जिनका किसी भी प्रकार से आदिमध्यकालीन भारतीय जीवन में किसी पक्ष के साथ संबंध रहा है। ऐसा समझा जाता है कि द्यूतविद्या, चौरविद्या आदि जैसे विषयों पर ग्रंथ बनाना भी संस्कृत पंडितों ने नहीं छोड़ा था। एक बात और थी।

भारतीय लोकजीवन में संस्कृत की ऐसी शास्त्रीय प्रतिष्ठा रही है कि ग्रंथों की मान्यता के लिए संस्कृत में रचना को आवश्यक माना जाता था। इसी कारण बौद्धों और जैनों, के दर्शन, धर्मसिद्धांत, पुराणगाथा आदि नाना पक्षों के हजारों ग्रंथों को पाली या प्राकृत में ही नहीं संस्कृत में सप्रास रचना हुई है। संस्कृत विद्या की न जाने कितनी महत्वपूर्ण शाखाओं का यहाँ उल्लख भी अल्पस्थानता के कारण नहीं किया जा सकता है। परंतु निष्कर्ष रूप से पूर्ण विश्वास के

साथ कहा जा सकता है कि भारत की प्राचीन संस्कृत भाषा–अत्यंत समर्थ, संपन्न और ऐतिहासिक महत्व की भाषा है। इस प्राचीन वाणी का वाङ्मय भी अत्यंत व्यापक, सर्वतोमुखी, मानवतावादी तथा परमसंपन्न रहा है। विश्व की भाषा और साहित्य में संस्कृत भाषा और साहित्य का स्थान अत्यंत महत्वशाली है। समस्त विश्व के प्रच्यविद्याप्रेमियों ने संस्कृत को जो प्रतिष्ठा और उच्चासन दिया है, उसके लिए भारत के संस्कृतप्रेमी सदा कृतज्ञ बने रहेंगे।

ब्रह्म पुराण हिंदू धर्म के क्त पुराणों में से एक प्रमुख पुराण है। इसे पुराणों में महापुराण भी कहा जाता है। पुराणों की दी गयी सूची में इस पुराण को प्रथम स्थान पर रखा जाता है। कुछ लोग इसे पहला पुराण भी मानते हैं। इसमें विस्तार से सृष्टि जन्म, जल की उत्पZ्ाि, ब्रह्म का आविर्भाव तथा देव–दानव जन्मों के विषय में बताया गया है। इसमें सूर्य और चन्द्र वंशों के विषय में भी वर्णन किया गया है। इसमें ययाति या पुरु के वंश–वर्णन से मानव–विकास के विषय में बताकर राम–कृष्ण–कथा भी वर्णित है। इसमें राम और कृष्ण के कथा के माध्यम से अवतार के स□बन्ध में वर्णन करते हुए अवतारवाद की प्रतिष्ठा की गई है। इस पुराण में सृष्टि की उत्पZ्ाि, पृथु का पावन चरित्र, सूर्य एवं चन्द्रवंश का वर्णन, श्रीकृष्ण–चरित्र, कल्पान्तजीवी मार्कण्डेय मुनि का चरित्र, तीर्थों का माहात□य एवं अनेक भक्तिपरक आ□यानों की सुन्दर चर्चा की गयी है। भगवान् श्रीकृष्ण की ब्रह्मरूप में विस्तृत व्या□या होने के कारण यह ब्रह्मपुराण के नाम से प्रसिद्ध है। इस पुराण में साकार ब्रह्म की उपासना का विधान है।

इसमें ब्रह्म को सर्वोपरि माना गया है। इसीलिए इस पुराण को प्रथम स्थान दिया गया है। पुराणों की पर□परा के अनुसार ब्रह्म पुराण में सृष्टि के समस्त लोकों और भारतवर्ष का भी वर्णन किया गया है। कलियुग का वर्णन भी इस पुराण में विस्तार से उपलŽध है। ब्रह्म के आदि होने के कारण इस पुराण को आदिपुरण भी कहा जाता है। व्यास मुनि ने इसे सर्वप्रथम लिखा है। इसमें दस सहस्र श्लोक हैं। प्राचीन पवित्र भूमि नैमिष अरण्य में व्यास शिष्य सूत मुनि ने यह पुराण समाहित ऋषि वृन्द में सुनाया था। इसमें सृष्टि, मनुवंश, देव देवता, प्राणि, पुथ्वी, भूगोल, नरक, स्वर्ग, मंदिर, तीर्थ आदि का निरूपण है। शिव–पार्वती विवाह, कृष्ण लीला, विष्णु अवतार, विष्णु पूजन, वर्णाश्रम, श्राद्धकर्म, आदि का विचार है। स□पूर्ण ब्रह्म पुराण में ख्ब्ף अध्याय हैं। इसकी श्लोक सं□या लगभग क,¯ है। इस पुराण की कथा लोमहर्षण सूत जी एवं शौनक ऋषियों के संवाद के माध्यम से वर्णित है। यही कथा प्राचीन काल में ब्रह्मा ने दक्ष प्रजापति को सुनायी थी।

ब्रह्म पुराण का धार्मिक दृष्टि से अत्यन्त महŽ्व है। साथ ही इसका पर्यटन की दृष्टि से भी महत्व है। इसमें अनेक तीर्थों– भद्र तीर्थ, पतत्रि तीर्थ, विप्र तीर्थ, भानु तीर्थ, भिल्ल तीर्थ आदि का विस्तार से वर्णन मिलता है। इसमें सृष्टि के आरंभ में हुए महाप्रलय के विषय में भी बताया गया है। इसमें मोक्ष–धर्म, ब्रह्म का स्वरूप और योग–विधि की भी विस्तृत जानकारी दी गई है। इसमें सां□य और योग दर्शन की व्या□या करके मोक्ष–प्राप्ति के उपायों पर प्रकाश डाला गया है। यह वैष्णव पुराणों में प्रमुख माना गया है। ब्रह्मपुराण का आरंभ इस कथा के साथ होता है कि– प्राचीन काल की बात है कि नैमिषारण्य में मुनियों का आगमन हुआ। सभी ऋषि–मुनि वहां ज्ञानार्जन के लिए एकत्रित हुए। कुछ समय बाद वहां पर सूतजी का भी आगमन हुआ तो मुनियों ने सूतजी का आदर–सत्कार किया और कहा, हे भगवन् ! आप अत्यन्त ज्ञानी–ध्यानी

हैं। आप हमें ज्ञान–भक्तिवर्धक पुराणों की कथा सुनाइए। यह सुनकर सूतजी बोले, आप मुनियों की जिज्ञासा अति उटॅ्म है और इस समय मैं आपको ब्रह्म पुराण सुनाऊंगा।

यह पुराण सब पुराणों में प्रथम और धर्म अर्थ काम और मोक्ष को प्रदान करने वाला है, इसके अन्दर नाना प्रकार के आयान है, देवता दानव और प्रजापतियों की उत्पटॅि इसी पुराण में बतायी गयी है। लोकेश्वर भगवान सूर्य के पुण्यमय वंश का वर्णन किया गया है, जो महापातकों के नाश को करने वाला है। इसमें ही भगवान रामचन्द्र के अवतार की कथा है, सूर्य वंश के साथ चन्द्रवंश का वर्णन किया गया है, श्रीकृष्ण भगवान की कथा का विस्तार इसी में है, पाताल और स्वर्ग लोक का वर्णन नरकों का विवरण सूर्यदेव की स्तुति कथा और पार्वती जी के जन्म की कथा का उल्लेख लिखा गया है। दक्ष प्रजाप्ति की कथा और एकाम्रक क्षेत्र का वर्णन है। पुरुषोटॅ्म क्षेत्र का विस्तार के साथ किया गया है, इसी में श्रीकृष्ण चरित्र का विस्तारपूर्वक लिखा गया है, यमलोक का विवरण पितरों का श्राद्ध और उसका विवरण भी इसी पुराण में बताया गया है, वर्णों और आश्रमों का विवेचन भी कहा गया है, योगों का निरूपण सांय सिद्धान्तों का प्रतिपादन ब्रह्मवाद का दिग्दर्शन और पुराण की प्रशंसा की गयी है। इस पुराण के दो भाग है और पढने सुनने से यह दीर्घता की ओर बढाने वाला है। सूतजी ने मुनियों के आग्रह को स्वीकार करते हुए कहा, सर्वप्रथम मैं इस ब्रह्म को नमस्कार करता हूं जिसके द्वारा माया से परिपूर्ण यह समस्त संसार रचा गया है और जो प्रत्येक कल्प में लीन होकर फिर से उत्पन्न होता है। जिसका स्मरण करके ऋषि, मुनि, देव, मनुष्य, मोक्ष प्राप्त करते हैं।

वह विष्णु, अविकारी, शुद्ध परमात्म, शाश्वत, सर्वव्यापक, अजन्मा, हिरण्यगर्भ हरि, शंकर और वासुदेव–अनेक नामों से जाता है। इसी ईश्वर ने सृष्टि की रचना की है। सृष्टि रचना के रूप में वह तेजस्वी ब्रह्म है जिसके द्वारा पहले महत् तटॅ्व उत्पन्न हुआ। उससे अहंकार, फिर अहंकार से पंचमहाभूतों की उत्पटॅि हुई। पंचमहाभूतों से अनेक भेदाभेद पैदा हुए। भगवान् स्वयंभू ने सृष्टि की उत्पटॅि के लिए सबसे पहले 'नार' जल की उत्पटॅि की। फिर उसमें बीज डाला गया। उससे परम पुरुष की नाभि में एक अंडा निकला। यह अंडा और कुछ नहीं था ब्रह्म का ज्ञानकोश ही था। इस अंडे से ब्रह्म की उत्पटॅि हुई। इस अंडे को भगवान नारायण द्वारा स्वर्ग और पृथ्वी में विभक्त कर दिया गया। इसके बीच आकाश बना और भगवान के द्वारा ही दशों दिशाओं को धारण किया गया। दशों दिशाओं के बाद काल, मन, वाणी और काम, क्रोध तथा रति की रचना हुई। फिर प्रजापतियों की रचना हुई। इसमें–मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य पुलह कृतु और वसिष्ठ के नाम हैं। ये ऋषि मानस सृष्टि के रूप में उत्पन्न किये गए। मानसपुत्रों की सृष्टि के बाद भगवान शिव और फिर उसके बाद सनत्कुमार उत्पन्न हुए। इस सात ऋषियों से ही शेष प्रजा का विकास हुआ। इनमें रुद्रगण भी सिमलित हैं। फिर बिजली, वज्र, मेघ, धनुष खड्ग पर्जन्य आदि का निर्माण हुआ। यज्ञों के सपादन के लिए वेद शास्त्रों की ऋचाओं की सृष्टि हुई। साध्य देवों की उत्पटॅि के बाद भूतों का जन्म हुआ। किन्तु ऋषिभाव के कारण सृष्टि का विकास नहीं हुआ, इसलिए ब्रह्मा ने मैथुनी सृष्टि करने का विचार किया और स्वयं के दो भाग किये। दक्षिणी वाम भाग से पुरुष और स्त्री की सृष्टि हुई। इनके प्रारिभक नाम मनु और शतरूपा रखे थे। इस मनु ने ही मैथुनी सृष्टि का विकास किया। इसी मनु के नाम पर मन्वन्तरों का रूप स्वीकार किया गया।

मनु और शतरूपा से वीर नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ। वीर की पत्नी कुर्दम-पुत्री का□या से प्रियव्रत और उŽानपाद उत्पन्न हुए। इनके साथ सम्राट कुक्षि, प्रभु और विराट-पुट पैदा हुए। पूर्व प्रजापति अत्रि ने उŽानपाद को गोद ले लिया। इसकी पत्नी सुनृता थी। उससे चार पुत्र हुए, इनमें एक ध्रुवनामधारी हुआ। ध्रुव ने पांच वर्ष की अवस्था में ही तप करके अनेक देवताओं को प्रसन्न किया और पत्नी से श्लिष्ट तथा भव्य नाम के दो पुत्र पैदा हुए। श्लिष्ट ने सुच्छाया से रिपु, रिपुंजय, वीर, वृकल, वृकतेजा पुत्र उत्पन्न किए। इसके बाद वंश विकास के लिए रिपु ने चक्षुष को जन्म दिया, चक्षुष से चाक्षुष मनु हुए और मनु ने वैराज और वैराज की कन्या से-कुत्सु, पुरु, शतद्यु□न, तपस्वी, सत्यवाक्, कवि, अग्निष्टुत, अतिराम, सुद्यु□न, अभिमन्यु-ये दश पुत्र हुए। फिर इसकी पर□परा में अंग और सुनीथा से वेन नाम पुत्र की उत्पŽि हुई। बेन के दुष्ट व्यवहार के कारण ऋषियों ने उसे मार डाला। किन्तु उसकी मृत्यु से शासन की समस्या उठ खड़ी हुई। राज्य को सुव्यवस्थित रूप से चलाने के लिए प्रजा को आतताइयों के निरंकुश हो जाने की आशंका को देखते हुए मुनियों ने वेन के दाहिने हाथ का मंथन किया। इससे धनुष और कवच-कुंडल सहित पृथु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। इस तेजस्वी यशस्वी और प्रजा के कष्टों को हरने वाले पृथु ने अपने राज्यकाल में सर्वत्र अपनी कीर्ति फैला दी। राजसूय यज्ञ करके चक्रवर्ती सम्राट का पद पाया। परम ज्ञानी और निपुण सूत और मागध इस पृथु की ही संतान हुए। राजा पृथु ने पृथ्वी को अपने परिश्रम से अन्नदायिनी और उर्वरा बनाया। इसके इस परिश्रम और प्रजाहित भाव के कारण ही उसे लोग साक्षात् विष्णु मानने लगे।